Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
https://doi.org/10.5281/zenodo.23295949
ISSN : 3048-6971

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग के युग में भारतीय पुलिस सेवा के समक्ष समकालीन चुनौतियाँ

अंजना

शोध छात्रा,राजनीति विज्ञान विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सारांश

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और मशीन लर्निंग समकालीन पुलिसिंग की प्रकृति और कार्यप्रणाली को तीव्र गति से परिवर्तित कर रहे हैं। भारतीय पुलिस संगठन भी अपराध मानचित्रण, चेहरे की पहचान, वीडियो विश्लेषण, डिजिटल फॉरेंसिक तथा साइबर अपराध अन्वेषण जैसे क्षेत्रों में इन तकनीकों को तेजी से अपना रहे हैं। इन तकनीकों से अपराध की रोकथाम और जांच की दक्षता बढ़ाने, सीमित संसाधनों के अधिक प्रभावी उपयोग तथा निर्णय–निर्माण को त्वरित बनाने की संभावनाएँ उत्पन्न होती हैं। तथापि, इनके बढ़ते उपयोग ने कई महत्वपूर्ण कानूनी, नैतिक एवं संस्थागत प्रश्न भी सामने रखे हैं।

यह अध्ययन भारतीय पुलिस सेवाओं में AI और ML के उपयोग से उत्पन्न प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण करता है। इनमें पुलिस द्वारा कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के लिए समर्पित विधिक ढाँचे का अभाव, निजता एवं निगरानी से संबंधित संवैधानिक चिंताएँ, एल्गोरिदिमक पक्षपात (Algorithmic Bias) एवं निम्न गुणवत्ता वाले डेटा की समस्या, निर्णय–निर्माण प्रक्रियाओं में पारदर्शिता एवं जवाबदेही की कमी, सक्षम अपराधों जैसे डीपफेक और व्यापक ऑनलाइन धोखाधड़ी की बढ़ती चुनौतियाँ, सीमित तकनीकी क्षमता, स्वचालित प्रणालियों पर अत्यधिक निर्भरता तथा पुलिस संस्थाओं के प्रति जनविश्वास पर संभावित प्रतिकूल प्रभाव शामिल हैं।

अंतरराष्ट्रीय शोध–साहित्य, भारतीय संवैधानिक सिद्धांतों तथा हाल के भारतीय नीतिगत दस्तावेजों के विश्लेषण के आधार पर यह अध्ययन तर्क प्रस्तुत करता है कि पुलिसिंग में तकनीकी नवाचारों को अपनाने की गति उनके नियमन और शासन–संबंधी व्यवस्थाओं के विकास की तुलना में कहीं अधिक तेज रही है। परिणामस्वरूप, तकनीकी दक्षता और लोकतांत्रिक जवाबदेही के बीच संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। इसी संदर्भ में अध्ययन एक बहु–स्तरीय नियामक एवं संस्थागत ढाँचे का प्रस्ताव करता है, जिसमें पुलिस द्वारा एआई के उपयोग हेतु स्पष्ट विधिक आधार, स्वतंत्र ऑडिट एवं एल्गोरिदिमक प्रभाव आकलन, स्वचालित निर्णयों पर अनिवार्य मानवीय पर्यवेक्षण, डेटा–सुरक्षा एवं तकनीकी खरीद से संबंधित मानक, क्षमता–निर्माण कार्यक्रम तथा पुलिस नैतिकता और आचार संहिताओं का समकालीन तकनीकी संदर्भ में पुनर्सुदृढ़ीकरण शामिल है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता पुलिसिंग की प्रभावशीलता और क्षमता को सुदृढ़ करने की महत्वपूर्ण संभावनाएँ रखती है, किंतु उसका वैध और नैतिक उपयोग तभी संभव है जब वह संवैधानिक मूल्यों, विधिक नियंत्रण, पारदर्शिता तथा सार्वजनिक जवाबदेही के अधीन संचालित हो। एआई को पुलिस विवेक का विकल्प नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक शासन और विधि के शासन के अनुरूप कार्य करने वाले सहायक साधन के रूप में समझा जाना चाहिए।

संकेत शब्दः आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, भारतीय पुलिस, प्रेडिक्टिव पुलिसिंग, फेशियल रिकग्निशन, एल्गोरिदम पक्षपात, निजता, जवाबदेही, साइबर अपराध

प्रस्तावनाः

पुलिस संगठनों ने ऐतिहासिक रूप से नई प्रौद्योगिकियों को अपनाते हुए अपनी कार्यप्रणाली को निरंतर विकसित किया है। टेलीग्राफ, गश्ती वाहन, फिंगरप्रिंट डेटाबेस और क्लोज्ड–सर्किट टेलीविजन जैसी तकनीकों ने पुलिस कार्य को अधिक संगठित और प्रभावी बनाया। तथापि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग पूर्ववर्ती तकनीकी नवाचारों से गुणात्मक रूप से भिन्न हैं। ये प्रणालियाँ केवल सूचना के संकलन, भंडारण अथवा संप्रेषण तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि व्यक्तियों का वर्गीकरण करती हैं, जोखिम का आकलन करती हैं, संभावित कार्रवाइयों का सुझाव देती हैं तथा कुछ परिस्थितियों में सीमित मानवीय हस्तक्षेप के साथ निर्णयात्मक कार्य भी संपादित कर सकती हैं। परिणामस्वरूप, ऐसी तकनीकों का पुलिस सेवा में उपयोग राज्य और नागरिक के मध्य संबंधों की प्रकृति को पुनर्परिभाषित करने की क्षमता रखता है। जैसा कि ब्रेन (Brayne, S. 2020) ने इंगित किया है, डेटा–आधारित पुलिसिंग निगरानी की पहुँच का विस्तार करती है तथा पुलिस विवेक (Police Discretion) के प्रयोग को ऐसे तरीकों से प्रभावित करती है जो न केवल जनता बल्कि कई बार स्वयं पुलिस अधिकारियों के लिए भी पूर्णतः पारदर्शी नहीं होते।

भारतीय संदर्भ में यह प्रश्न विशेष महत्व प्राप्त करता है। भारत विश्व के सबसे बड़े पुलिस संगठनों में से एक का संचालन करता है, जहाँ विशाल एवं विविधतापूर्ण जनसंख्या, तीव्र डिजिटल विस्तार और पुलिस प्रौद्योगिकी के बढ़ते बाजार ने एआई आधारित समाधान अपनाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया है। दूसरी ओर, भारतीय पुलिस व्यवस्था लंबे समय से कार्मिकों की कमी, अत्यधिक

कार्यभार, राजनीतिक हस्तक्षेप और जनविश्वास से संबंधित चुनौतियों का सामना करती रही है। ऐसी परिस्थितियों में एआई को प्रायः एक "फोर्स मल्टीप्लायर" के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जो सीमित संसाधनों के साथ अधिक दक्षतापूर्वक कार्य करने में सहायता कर सकता है। यद्यपि यह दृष्टिकोण व्यावहारिक आकर्षण रखता है, किंतु इसके साथ एक मूलभूत प्रश्न भी जुड़ा है; क्या ऐसी प्रौद्योगिकियों का सुरक्षित और न्यायसंगत उपयोग उन संस्थागत परिवेशों में संभव है जहाँ जवाबदेही और निगरानी तंत्र स्वयं अभी सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया में हैं?

इन्हीं प्रश्नों के आलोक में यह अध्ययन भारतीय पुलिस सेवाओं में एआई और मशीन लर्निंग के उपयोग से उत्पन्न प्रमुख चुनौतियों तथा उनके संभावित समाधानों का विश्लेषण करता है। प्रारंभिक भाग में पुलिसिंग में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के वैचारिक आधार तथा भारतीय संदर्भ में उसके वर्तमान उपयोग का परीक्षण किया गया है। इसके पश्चात् अध्ययन कुछ प्रमुख श्रेणियों में उभरती चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है–

- विधिक एवं संवैधानिक प्रश्न।
- एल्गोरिद्मिक पक्षपात और डेटा गुणवत्ता।
- पारदर्शिता एवं जवाबदेही का अभाव।
- निगरानी और नागरिक स्वतंत्रताओं पर प्रभाव।
- एआई सक्षम अपराधों की उभरती चुनौतियाँ
- संस्थागत क्षमता की सीमाएँ।
- मानवीय निर्णय–निर्माण और ऑटोमेशन बायस।
- जनविश्वास और पुलिस नैतिकता से संबंधित प्रश्न।

अध्ययन एक बहु–स्तरीय नीतिगत एवं संस्थागत ढाँचे का प्रस्ताव करता है, जिसमें स्पष्ट विधिक विनियमन, स्वतंत्र ऑडिट एवं प्रभाव आकलन, मानव पर्यवेक्षण की अनिवार्यता, डेटा–सुरक्षा और खरीद प्रक्रिया के मानक, क्षमता निर्माण कार्यक्रम तथा पुलिस नैतिकता और आचार संहिताओं का पुनर्सुदृढ़ीकरण शामिल है। इस प्रकार, यह अध्ययन पुलिस नैतिकता और प्रौद्योगिकी के अंतर्संबंध को रेखांकित करते हुए तर्क देता है कि एआई का सफल उपयोग केवल तकनीकी दक्षता का प्रश्न नहीं है। यह समान रूप से वैधानिकता, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा का भी प्रश्न है। अतः कृत्रिम बुद्धिमत्ता पुलिसिंग को अधिक प्रभावी बना सकती है, किंतु केवल तब जब उसका उपयोग संवैधानिक सीमाओं, संस्थागत निगरानी और सार्वजनिक जवाबदेही के ढाँचे के भीतर किया जाए।

सैद्धांतिक पृष्ठभूमिः

कृत्रिम बुद्धिमत्ता उन संगणकीय प्रणालियों को संदर्भित करती है जो सामान्यतः मानवीय बुद्धिमत्ता से संबद्ध कार्यों, जैसे पैटर्न पहचान, पूर्वानुमान, निर्णय–सहायता तथा भाषा प्रसंस्करण, को संपादित करने में सक्षम होती हैं। मशीन लर्निंग जो एआई की एक प्रमुख उपशाखा है, ऐसे एल्गोरिद्मिक मॉडलों पर आधारित होती है जो पूर्व उपलब्ध डेटा से सांख्यिकीय पैटर्न सीखकर उन्हें नए मामलों पर लागू करते हैं। समकालीन पुलिसिंग में इन तकनीकों का महत्व निरंतर बढ़ रहा है और इनके अनुप्रयोगों ने अपराध नियंत्रण तथा जांच प्रक्रियाओं की प्रकृति को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया है।

पुलिसिंग के संदर्भ में एआई और मशीन लर्निंग के तीन प्रमुख उपयोग विशेष उल्लेखनीय हैं। प्रथम, प्रिडिक्टिव एनालिटिक्स, जिसके माध्यम से ऐतिहासिक अपराध डेटा का विश्लेषण कर संभावित अपराध–स्थलों, जोखिम क्षेत्रों अथवा संभावित अपराधी गतिविधियों का पूर्वानुमान लगाने का प्रयास किया जाता है (Perry, 2013)। द्वितीय, बायोमेट्रिक पहचान प्रणालियाँ, विशेषकर चेहरे की पहचान, जो उपलब्ध छवियों या वीडियो फुटेज की तुलना पूर्वनिर्मित डेटाबेस से करके व्यक्तियों की पहचान करने का कार्य करती हैं। तृतीय, बड़े पैमाने पर डेटा एकीकरण और वीडियो विश्लेषण, जिसके अंतर्गत विभिन्न डेटाबेस, निगरानी कैमरों, डिजिटल रिकॉर्डों तथा अन्य स्रोतों से प्राप्त जानकारी को एकीकृत कर व्यवहारिक पैटर्नों की पहचान, गतिविधियों की निगरानी तथा व्यक्तियों की ट्रैकिंग की जाती है (Ferguson, 2017)।

इन प्रत्यक्ष परिचालनात्मक उपयोगों के अतिरिक्त, कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रयोग डिजिटल फॉरेंसिक, स्वचालित अनुवाद, दस्तावेज विश्लेषण, साइबर अपराध अन्वेषण तथा वित्तीय अपराधों का पता लगाने जैसे विशिष्ट क्षेत्रों में भी तीव्र गति से बढ़ रहा है। विशेष रूप से, विशाल मात्रा में उपलब्ध डिजिटल डेटा का विश्लेषण करने की क्षमता ने जटिल अपराधों की जांच को अधिक व्यवस्थित और प्रभावी बनाने की संभावनाएँ उत्पन्न की हैं। परिणामस्वरूप, ।ए और डस् केवल पुलिस कार्यकुशलता में वृद्धि के उपकरण नहीं रह गए हैं, बल्कि वे पुलिस निर्णय–निर्माण, निगरानी तथा कानून प्रवर्तन की संरचना को पुनर्परिभाषित करने वाली प्रमुख प्रौद्योगिकियों के रूप में उभर रहे हैं।

पुलिसिंग में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और मशीन लर्निंगः

एल्गोरिदम–आधारित शासन पर केंद्रित समकालीन साहित्य इस बात पर बल देता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता से उत्पन्न जोखिमों का स्वरूप केवल तकनीक पर नहीं, बल्कि उस संस्थागत संदर्भ पर भी निर्भर करता है जिसमें उसका उपयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, संगीत या मनोरंजन संबंधी अनुशंसा प्रणालियों में होने वाली त्रुटियों के परिणाम अपेक्षाकृत सीमित होते हैं, जबकि पुलिसिंग अथवा आपराधिक न्याय के क्षेत्र में प्रयुक्त एल्गोरिद्मिक प्रणालियों की त्रुटियाँ किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा अथवा शारीरिक सुरक्षा पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकती हैं। यदि कोई प्रणाली किसी व्यक्ति को गलत रूप से संदिग्ध के रूप में चिह्नित करती है, तो इसके परिणामस्वरूप अनावश्यक निगरानी, पूछताछ, गिरफ्तारी अथवा अन्य प्रतिकूल राज्यीय हस्तक्षेप उत्पन्न हो सकते हैं।

इस संदर्भ में बारोकस और सेल्बस्ट (Barocas, S., और Selbst, A. D. 2016) तर्क देते हैं कि डेटा–आधारित निर्णय प्रणालियाँ प्रत्यक्ष भेदभावपूर्ण मंशा के अभाव में भी असमानताओं का पुनरुत्पादन कर सकती हैं, क्योंकि वे ऐसे ऐतिहासिक डेटा पर आधारित होती हैं जिनमें सामाजिक, आर्थिक अथवा संस्थागत पूर्वाग्रह पहले से अंतर्निहित होते हैं। परिणामस्वरूप, एल्गोरिद्म वस्तुनिष्ठ प्रतीत होने के बावजूद विद्यमान असमानताओं को और अधिक सुदृढ़ कर सकते हैं। इसी प्रकार Aleš Završnik (2021) का मत है कि आपराधिक न्याय प्रणाली में एल्गोरिद्मिक उपकरणों का विस्तार निर्णय–निर्माण की शक्ति को उन संस्थाओं और व्यक्तियों के पक्ष में केंद्रित कर देता है जो इन प्रणालियों का विकास, नियंत्रण और संचालन करते हैं। इसके विपरीत, जिन व्यक्तियों पर इन निर्णयों का प्रभाव पड़ता है, उनके लिए निर्णयों की प्रक्रिया को समझना या उन्हें चुनौती देना अधिक कठिन हो जाता है।

पुलिसिंग के संदर्भ में ये चिंताएँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि यहाँ एल्गोरिद्मिक निर्णयों का प्रभाव प्रायः उन सामाजिक समूहों पर पड़ता है जिनकी संस्थागत और कानूनी संसाधनों तक पहुँच पहले से सीमित होती है। परिणामस्वरूप, तकनीकी त्रुटियाँ, डेटा–आधारित पूर्वाग्रह अथवा अपारदर्शी निर्णय–प्रक्रियाएँ केवल प्रशासनिक समस्याएँ नहीं रह जातीं, बल्कि वे निष्पक्षता, समानता, प्रक्रियात्मक न्याय और नागरिक अधिकारों से जुड़े गंभीर नैतिक एवं संवैधानिक प्रश्नों का रूप ले लेती हैं। इस प्रकार, पुलिसिंग में ।प् और मशीन लर्निंग के उपयोग का मूल्यांकन केवल उनकी दक्षता या अपराध–नियंत्रण क्षमता के आधार पर नहीं, बल्कि उनके न्यायसंगत, पारदर्शी और उत्तरदायी उपयोग के संदर्भ में भी किया जाना आवश्यक है।

भारतीय पुलिसिंग में एआई और मशीन लर्निंगः

भारतीय पुलिस संगठनों ने पिछले एक दशक में अपने डिजिटल अवसंरचनात्मक आधार का उल्लेखनीय विस्तार किया है। इस प्रक्रिया में Crime and Criminal Tracking Network and Systems (CCTNS) तथा उससे संबद्ध अंतर एजेंसी प्लेटफॉर्मों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ये प्रणालियाँ अपराध तथा अपराधियों से संबंधित अभिलेखों के व्यापक डिजिटलीकरण को संभव बनाती हैं और पुलिसिंग में डेटा–संचालित विश्लेषण के लिए एक विशाल सूचना–स्रोत उपलब्ध कराती हैं। परिणामस्वरूप, विभिन्न राज्यों और पुलिस इकाइयों ने अपराध विश्लेषण, संसाधन आवंटन तथा परिचालनात्मक निर्णय–निर्माण के लिए उन्नत विश्लेषणात्मक उपकरणों का उपयोग प्रारम्भ किया है।

दिल्ली पुलिस द्वारा अपराध–मानचित्रण (Crime Mapping) और विश्लेषणात्मक प्रणालियों का उपयोग ऐसे हॉटस्पॉट मैप्स तैयार करने के लिए किया गया है, जिनके आधार पर पुलिस बल की तैनाती और गश्ती गतिविधियों की योजना बनाई जाती है। Marda और Narayan (2020) का तर्क है कि ऐसी प्रणालियों की प्रभावशीलता और निष्पक्षता केवल एल्गोरिद्म पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उस डेटा तथा डिजाइन–तर्क पर भी निर्भर करती है जिसके आधार पर भविष्यवाणियाँ तैयार की जाती हैं। इसी प्रकार, कई पुलिस संगठनों ने कृत्रिम बुद्धिमत्ता–सक्षम अपराधी डेटाबेस तथा मोबाइल अनुप्रयोगों को अपनाया है, जिनके माध्यम से अधिकारी डिजिटल अभिलेखों की खोज, संदिग्ध व्यक्तियों की पहचान तथा बायोमेट्रिक मिलान जैसी प्रक्रियाएँ संपादित कर सकते हैं। अनेक राज्यों में पुलिस एजेंसियों और निजी प्रौद्योगिकी कंपनियों के बीच सहयोग के माध्यम से ऐसे उपकरण विकसित किए जा रहे हैं, जबकि महाराष्ट्र सहित कई राज्यों ने एकीकृत कमांड एवं नियंत्रण केंद्रों (Integrated Command and Control Centres) तथा वीडियो एनालिटिक्स–सक्षम निगरानी नेटवर्कों में निवेश किया है।

इन तकनीकों में चेहरे की पहचान सर्वाधिक चर्चित एवं विवादास्पद रही है। इस तकनीक ने कानून–प्रवर्तन एजेंसियों के लिए पहचान और निगरानी की नई संभावनाएँ उत्पन्न की हैं, किंतु इसके साथ–साथ निजता, वैधानिकता तथा नागरिक स्वतंत्रताओं से संबंधित गंभीर प्रश्न भी उठाए हैं। भारत में विभिन्न पुलिस एजेंसियों द्वारा इस तकनीक का उपयोग लापता व्यक्तियों का पता लगाने, संदिग्धों की पहचान करने तथा सार्वजनिक अव्यवस्था से जुड़ी घटनाओं की जांच में किया गया है। साथ ही, नागरिक समाज संगठनों और विधि विशेषज्ञों ने इस प्रकार की तकनीकों के विस्तार की आलोचना इस आधार पर की है कि उनका उपयोग अनेक मामलों में स्पष्ट और विशिष्ट वैधानिक ढाँचे के अभाव में किया जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप, चेहरे की पहचान प्रौद्योगिकी की वैधता और संवैधानिकता न्यायिक तथा सार्वजनिक विमर्श का विषय बनी हुई है।

इसके समानांतर, भारतीय पुलिस संगठनों को साइबर अपराधों में तीव्र वृद्धि का भी सामना करना पड़ रहा है। डिजिटल धोखाधड़ी, पहचान की चोरी, ऑनलाइन वित्तीय अपराध तथा साइबर–सक्षम संगठित अपराधों के विस्तार ने प्रौद्योगिकी–आधारित अन्वेषण क्षमताओं की आवश्यकता को बढ़ा दिया है। इस संदर्भ में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की भूमिका द्वैध प्रकृति की है। एक ओर, जांच एजेंसियाँ

डेटा विश्लेषण, पैटर्न पहचान और नेटवर्क विश्लेषण के माध्यम से साइबर अपराधों का पता लगाने और डिजिटल साक्ष्यों की पहचान करने के लिए एआई आधारित उपकरणों का उपयोग कर रही हैं। दूसरी ओर, अपराधी भी कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग डीपफेक सामग्री, कृत्रिम आवाजों, स्वचालित फिशिंग अभियानों तथा बड़े पैमाने पर डिजिटल धोखाधड़ी के लिए कर रहे हैं। एआई केवल अपराध–नियंत्रण का साधन नहीं रह गया है, बल्कि स्वयं अपराध और कानून–प्रवर्तन के बीच उभरती तकनीकी प्रतिस्पर्धा का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बन चुका है।

समकालीन चुनौतियाँः

कानूनी और संवैधानिक चुनौतियांः

भारतीय पुलिस सेवाओं में कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग के उपयोग से संबंधित सबसे गंभीर चुनौती एक स्पष्ट और समर्पित विधिक ढाँचे का अभाव है। यद्यपि पुलिस द्वारा निगरानी, बायोमेट्रिक पहचान, डेटा विश्लेषण तथा जोखिम–आधारित मूल्यांकन जैसी एआई संचालित तकनीकों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है, किंतु इनके संचालन, सीमाओं और जवाबदेही को निर्धारित करने वाले विशिष्ट कानूनी प्रावधान अभी पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हुए हैं। परिणामस्वरूप, तकनीकी नवाचार और संवैधानिक सुरक्षा उपायों के बीच एक महत्वपूर्ण नियामक अंतराल दिखाई देता है।

इस संदर्भ में भारतीय संवैधानिक न्यायशास्त्र महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करता है। न्यायाधीस पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ (2017) में सर्वोच्च न्यायालय ने निजता के अधिकार को संविधान द्वारा संरक्षित मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार करते हुए स्पष्ट किया कि राज्य का कोई भी हस्तक्षेप वैधानिक आधार, वैध उद्देश्य, आवश्यकता और आनुपातिकता की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। पुलिसिंग के संदर्भ में इसका अर्थ है कि निगरानी, प्रोफाइलिंग अथवा पहचान संबंधी तकनीकों का उपयोग केवल स्पष्ट कानूनी प्राधिकार के अधीन, वैध सार्वजनिक उद्देश्य के लिए तथा पर्याप्त सुरक्षा उपायों के साथ ही किया जाना चाहिए। इसी प्रकार, अनुराधा भसीन बनाम भारत संघ (2020) में सर्वोच्च न्यायालय ने डिजिटल क्षेत्र में राज्यीय हस्तक्षेपों पर भी आनुपातिकता के सिद्धांत की पुनः पुष्टि की। तथापि, व्यवहारिक स्तर पर पुलिस द्वारा एआई आधारित अनेक तकनीकों का उपयोग प्रायः विशिष्ट कानूनों के बजाय प्रशासनिक आदेशों, सरकारी निविदाओं तथा सामान्य पुलिस शक्तियों के आधार पर किया जाता है।

विधिक अस्पष्टता का यह प्रश्न डेटा संरक्षण व्यवस्था में भी दिखाई देता है। डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन अधिनियम, 2023 व्यक्तिगत डेटा के संरक्षण और प्रसंस्करण से संबंधित सामान्य दायित्व निर्धारित करता है, किंतु कानून–प्रवर्तन तथा राज्य के कुछ कार्यों के लिए व्यापक अपवाद भी प्रदान करता है। परिणामस्वरूप, पुलिस द्वारा व्यक्तिगत डेटा के उपयोग पर वे सभी सुरक्षा उपाय अनिवार्य रूप से लागू नहीं होते जो निजी क्षेत्र की संस्थाओं पर लागू किए गए हैं। इसी प्रकार, India AI Governance Guidelines मुख्यतः एक सिद्धांत–आधारित दृष्टिकोण अपनाती हैं, जो नवाचार को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से स्वैच्छिक अनुपालन और विद्यमान कानूनी प्रावधानों पर निर्भर करती हैं। यद्यपि यह दृष्टिकोण तकनीकी विकास को प्रोत्साहित करता है, किंतु उच्च–जोखिम वाले उपयोगों, विशेषकर चेहरे की पहचान और बायोमेट्रिक निगरानी, के संबंध में बाध्यकारी सीमाओं और जवाबदेही तंत्रों का पर्याप्त स्पष्टीकरण प्रदान नहीं करता।

हाल के आपराधिक न्याय सुधार भी इस समस्या का पूर्ण समाधान प्रस्तुत नहीं करते। भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 ने इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों, डिजिटल साक्ष्यों और फॉरेंसिक प्रक्रियाओं को अधिक महत्व प्रदान किया है, जिससे तकनीक–संचालित अन्वेषण को संस्थागत समर्थन मिलता है। तथापि, ये विधियां इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नहीं देतीं कि एआई आाधारित विश्लेषणों की विश्वसनीयता का परीक्षण किस प्रकार किया जाएगा, स्वचालित निर्णयों की पारदर्शिता किस सीमा तक सुनिश्चित की जाएगी, अथवा किसी आरोपी को ऐसे एल्गोरिद्मिक निष्कर्षों को चुनौती देने का कितना अवसर प्राप्त होगा।

भारतीय पुलिसिंग में एआई और एमएल के उपयोग से संबद्ध केंद्रीय चुनौती तकनीकी क्षमता की नहीं, बल्कि विधिक और संवैधानिक शासन की है। जब तक पुलिस द्वारा एआई के उपयोग के लिए स्पष्ट वैधानिक आधार, स्वतंत्र निगरानी, प्रभावी जवाबदेही और पर्याप्त नागरिक सुरक्षा उपायों की स्थापना नहीं की जाती, तब तक इन प्रौद्योगिकी का विस्तार निजता, समानता, प्रक्रियात्मक न्याय और नागरिक स्वतंत्रताओं से संबंधित गंभीर प्रश्न उत्पन्न करता रहेगा। इसलिए एआई संचालित पुलिसिंग का भविष्य केवल तकनीकी नवाचार पर नहीं, बल्कि उस नियामक और संवैधानिक ढाँचे पर निर्भर करेगा जिसके भीतर उसका संचालन किया जाता है।

2. एल्गोरिदम का पक्षपात और डेटा की गुणवत्ताः

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग प्रणालियों की विश्वसनीयता मूलतः उस डेटा की गुणवत्ता पर निर्भर करती है जिससे वे सीखती हैं। पुलिसिंग के संदर्भ में यह प्रश्न विशेष महत्व रखता है, क्योंकि अपराध संबंधी डेटा स्वयं अपराध का निष्पक्ष या पूर्ण रिकॉर्ड नहीं होता। वह उन सामाजिक और संस्थागत प्रक्रियाओं को भी प्रतिबिंबित करता है जिनके माध्यम से अपराध दर्ज किए जाते हैं, पुलिस संसाधनों का वितरण होता है, तथा विभिन्न समुदायों के साथ कानून–प्रवर्तन एजेंसियों का व्यवहार निर्धारित होता है। इसलिए, यदि ऐतिहासिक डेटा में पूर्वाग्रह या असमानताएँ निहित हैं, तो उन पर आधारित एल्गोरिद्मिक प्रणालियाँ भी उन्हीं प्रवृत्तियों का पुनरुत्पादन कर सकती हैं।

Lum और Isaac ने प्रदर्शित किया है कि पुलिस अभिलेखों पर आधारित प्रिडिक्टिव पुलिसिंग मॉडल एक प्रकार का फीडबैक लूप उत्पन्न कर सकते हैं। जब किसी क्षेत्र में अधिक पुलिस तैनात की जाती है, तो वहाँ अधिक घटनाएँ दर्ज होती हैं। इसके फलस्वरूप एल्गोरिद्म उस क्षेत्र को उच्च–जोखिम वाला मानकर भविष्य में और अधिक पुलिस उपस्थिति की अनुशंसा करता है। इस प्रकार, वास्तविक अपराध दर की अपेक्षा पुलिस गतिविधि स्वयं भविष्यवाणियों को प्रभावित करने लगती है। इसी प्रकार, Richardson का तर्क है कि यदि एल्गोरिद्मिक प्रणालियाँ ऐसे ऐतिहासिक डेटा पर प्रशिक्षित हों जो भेदभावपूर्ण अथवा दुरुपयोगपूर्ण पुलिसिंग प्रथाओं से प्रभावित रहा हो, तो वे भविष्य के निर्णयों में भी उन्हीं असमानताओं को पुनर्स्थापित कर सकती हैं।

भारतीय संदर्भ में यह समस्या और अधिक जटिल हो जाती है। अपराधों के कम पंजीकरण, राज्यों और पुलिस इकाइयों के बीच डेटा–संग्रहण की असंगत पद्धतियों, तथा कुछ जातीय, धार्मिक, जनजातीय और आर्थिक रूप से वंचित समुदायों के प्रति ऐतिहासिक संदेह की प्रवृत्तियों के कारण उपलब्ध डेटा की निष्पक्षता और पूर्णता पर प्रश्नचिह्न लगते हैं। Marda और Narayan ने दिल्ली में प्रयुक्त प्रिडिक्टिव पुलिसिंग प्रणालियों के अध्ययन में पाया कि डेटा–संग्रहण प्रक्रियाओं में एकरूपता का अभाव तथा रिकॉर्डिंग संबंधी सीमाएँ पूर्वानुमानों की विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकती हैं। इससे यह आशंका उत्पन्न होती है कि तकनीकी रूप से उन्नत प्रणालियाँ भी कमजोर या पक्षपातपूर्ण डेटा के कारण त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष उत्पन्न कर सकती हैं।

चेहरे की पहचान से संबंधित चिंताएँ इस समस्या को और गहरा करती हैं। अंतरराष्ट्रीय अध्ययनों ने पाया है कि अनेक बायोमेट्रिक प्रणालियाँ विभिन्न जनसांख्यिकीय समूहों के लिए समान स्तर की सटीकता प्रदर्शित नहीं करतीं। ग्रोदर जैसे लेखको ने अपने अध्ययन में विभिन्न एल्गोरिद्मों के बीच जनसांख्यिकीय समूहों के अनुसार त्रुटि–दरों में महत्वपूर्ण अंतर पाया गया, जबकि बुओलामविनी और गेब्रू जैसे विद्वानों की मान्यता है कि वाणिज्यिक पहचान प्रणालियों में विशेष रूप से गहरे रंग की त्वचा वाली महिलाओं के लिए अधिक त्रुटियों का दस्तावेजीकरण किया। यद्यपि ये अध्ययन मुख्यतः भारतीय संदर्भ के बाहर किए गए थे, फिर भी वे इस व्यापक प्रश्न को रेखांकित करते हैं कि ऐसी प्रणालियाँ विविध आबादी वाले देशों में किस हद तक निष्पक्ष और सटीक रूप से कार्य कर सकती हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह चिंता इसलिए और महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि पुलिस द्वारा प्रयुक्त चेहरे की पहचान प्रणालियों के प्रदर्शन, सटीकता और त्रुटि–दरों के संबंध में सार्वजनिक रूप से उपलब्ध स्वतंत्र मूल्यांकन अत्यंत सीमित हैं। विशेष रूप से, विभिन्न त्वचा–रंगों, क्षेत्रीय विविधताओं, भीड़भाड़ वाले परिवेशों तथा कम गुणवत्ता वाले वीडियो या प्रकाश व्यवस्था जैसी वास्तविक परिस्थितियों में इन प्रणालियों की प्रभावशीलता के संबंध में पर्याप्त पारदर्शिता का अभाव है। ऐसी परिस्थितियों में गलत पहचान (false match) केवल तकनीकी त्रुटि नहीं होती, बल्कि उसके परिणामस्वरूप किसी निर्दोष व्यक्ति से पूछताछ, निगरानी, हिरासत अथवा गिरफ्तारी जैसी गंभीर कानूनी और सामाजिक परिणतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

पुलिसिंग में एआई और मशीन लर्निंग के उपयोग से संबंधित एक मूलभूत चुनौती यह है कि एल्गोरिद्मिक निष्पक्षता केवल तकनीकी परिशुद्धता का प्रश्न नहीं है। यह डेटा की गुणवत्ता, संस्थागत पूर्वाग्रहों, पारदर्शिता तथा जवाबदेही से जुड़ा हुआ प्रश्न है। जब तक पुलिसिंग में प्रयुक्त प्रणालियों के प्रशिक्षण–डेटा, सटीकता और संभावित भेदभावपूर्ण प्रभावों का स्वतंत्र मूल्यांकन सुनिश्चित नहीं किया जाता, तब तक एआई आधारित निर्णयों के माध्यम से विद्यमान सामाजिक असमानताओं के और अधिक मजबूत होने का जोखिम बना रहेगा।

3. पारदर्शिता की कमी और कमजोर जवाबदेही:

पुलिस द्वारा उपयोग किए जाने वाले अनेक एआई आधारित उपकरण निजी प्रौद्योगिकी कंपनियों द्वारा विकसित स्वामित्वयुक्त प्रणालियाँ होते हैं। इन प्रणालियों के आपूर्तिकर्ता प्रायः एल्गोरिद्म, स्रोत कोड तथा प्रशिक्षण डेटा को व्यापारिक गोपनीयता के आधार पर सार्वजनिक परीक्षण से बाहर रखते हैं। परिणामस्वरूप, न तो आम नागरिक, न ही बचाव पक्ष के अधिवक्ता और कई मामलों में न्यायालय भी यह पूर्णतः समझ पाते हैं कि किसी विशेष निष्कर्ष या जोखिम–आकलन तक पहुँचने की प्रक्रिया क्या थी। फर्ग्यूसन के अनुसार, यह 'ब्लैक बॉक्स' प्रकृति आपराधिक न्याय प्रणाली में पारदर्शिता और प्रतिपक्षीय परीक्षण की उस प्रक्रिया को कमजोर करती है जो निष्पक्ष सुनवाई का मूल आधार मानी जाती है।

भारतीय संदर्भ में यह चुनौती और अधिक जटिल हो जाती है। पुलिसिंग प्रौद्योगिकियों की खरीद प्रक्रिया, एल्गोरिद्मिक सटीकता के स्वतंत्र सत्यापन, डेटा–साझाकरण की शर्तों तथा प्रदर्शन मूल्यांकन के संबंध में सार्वजनिक पारदर्शिता सीमित है। इसके अतिरिक्त, पुलिस निगरानी और शिकायत निवारण से संबंधित संस्थागत व्यवस्थाएँ भी सभी राज्यों में समान रूप से प्रभावी नहीं हैं। ऐसी स्थिति में यदि किसी एआई आधारित निर्णय के कारण किसी नागरिक को हानि पहुँचती है, तो उत्तरदायित्व निर्धारित करना अत्यंत कठिन हो जाता है। यह स्पष्ट नहीं रहता कि जिम्मेदारी उस पुलिस अधिकारी की है जिसने प्रणाली पर भरोसा किया, उस पर्यवेक्षक की जिसने उसके उपयोग को स्वीकृति दी, उस सरकारी एजेंसी की जिसने उसे खरीदा, या उस निजी विक्रेता की जिसने तकनीक विकसित की।

एआई संचालित पुलिसिंग एक ऐसी जवाबदेही शृंखला उत्पन्न करती है जिसकी सीमाएँ अस्पष्ट हो सकती हैं। जब निर्णय–निर्माण

अनेक संस्थागत और तकनीकी स्तरों में विभाजित हो जाता है, तब प्रभावित व्यक्ति के लिए त्रुटि की पहचान करना, उसके कारणों को समझना और प्रभावी उपचार प्राप्त करना और भी कठिन हो जाता है। इसलिए, पुलिसिंग में एआई के उपयोग के लिए केवल तकनीकी मानकों की नहीं, बल्कि पारदर्शिता, स्वतंत्र ऑडिट, एल्गोरिद्मिक व्याख्येयता तथा स्पष्ट उत्तरदायित्व–निर्धारण की भी आवश्यकता है; अत्यथा भारतीय पुलिस सेवा में दक्षता बढ़ाने के उद्देश्य से अपनाई गई तकनीकें न्याय, निष्पक्षता और नागरिक अधिकारों के लिए नए जोखिम उत्पन्न कर सकती हैं।

4. निगरानी, निजता और नागरिक स्वतंत्रताः

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने राज्य की निगरानी क्षमताओं का अभूतपूर्व विस्तार संभव बनाया है। जहाँ पारंपरिक निगरानी व्यवस्थाएँ मानवीय निरीक्षण और सीमित संसाधनों पर निर्भर थीं, वहीं एआई सक्षम प्रणालियाँ विशाल मात्रा में डेटा का वास्तविक समय में विश्लेषण कर सकती हैं। चेहरे की पहचान से युक्त एकीकृत कैमरा नेटवर्क सार्वजनिक स्थलों पर व्यक्तियों की निरंतर पहचान, गतिविधियों की निगरानी तथा उनके व्यवहार के डिजिटल रिकॉर्ड के निर्माण को संभव बनाते हैं। परिणामस्वरूप, पुलिसिंग में निगरानी की प्रकृति मात्र अपराध की जाँच से आगे बढ़कर व्यापक सामाजिक अवलोकन का स्वरूप ग्रहण कर सकती है।

इस संदर्भ में Brayne का तर्क है कि व्यापक डिजिटल निगरानी नागरिकों के व्यवहार पर एक 'चिलिंग इफेक्ट' उत्पन्न कर सकती है। जब व्यक्तियों को यह अनुभव होने लगता है कि उनकी गतिविधियाँ निरंतर रिकॉर्ड और विश्लेषित की जा रही हैं, तब वे अपने वैध एवं संवैधानिक रूप से संरक्षित व्यवहारों में भी परिवर्तन कर सकते हैं। इसका प्रभाव अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण सभा की स्वतंत्रता तथा संगठन बनाने की स्वतंत्रता जैसे लोकतांत्रिक अधिकारों पर पड़ सकता है। इस दृष्टि से एआई संचालित निगरानी केवल एक तकनीकी या प्रशासनिक प्रश्न नहीं है, बल्कि नागरिक स्वतंत्रताओं और लोकतांत्रिक भागीदारी से जुड़ा एक महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रश्न भी है।

भारतीय संदर्भ में यह चिंता विशेष महत्व रखती है। सार्वजनिक सभाओं, विरोध प्रदर्शनों अथवा अन्य सामूहिक कार्यक्रमों में प्रतिभागियों की पहचान हेतु निगरानी तकनीकों का उपयोग संविधान के अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 के तहत संरक्षित अधिकारों के संदर्भ में गंभीर प्रश्न उत्पन्न करता है। इसी परिप्रेक्ष्य में मनमोहन लाल शर्मा बनाम भारत संघ, 2021 के मामले से सम्बद्ध कार्यवाहियों के दौरान सर्वोच्च न्यायालय ने कथित डिजिटल निगरानी से जुड़े आरोपों की जाँच के लिए स्वतंत्र तकनीकी समिति का गठन किया तथा यह स्पष्ट किया कि राष्ट्रीय सुरक्षा के दावे न्यायिक परीक्षण और संवैधानिक समीक्षा से स्वतः प्रतिरक्षित नहीं हो सकते। यह दृष्टिकोण इंगित करता है कि डिजिटल युग में भी निगरानी गतिविधियों को वैधता, आवश्यकता और उत्तरदायित्व के संवैधानिक मानकों के अधीन रहना होगा।

एआई संचालित निगरानी के साथ एक अन्य महत्वपूर्ण जोखिम 'फंक्शन क्रीप' (function creep) का है। यह वह स्थिति है जिसमें किसी विशिष्ट और सीमित उद्देश्य के लिए एकत्रित डेटा का उपयोग बाद में अन्य उद्देश्यों के लिए किया जाने लगता है, बिना किसी नई कानूनी स्वीकृति या सार्वजनिक निगरानी के। उदाहरणार्थ, लापता व्यक्तियों की खोज, यातायात प्रबंधन या सार्वजनिक सुरक्षा के लिए संकलित डेटा को बाद में व्यापक खुफिया विश्लेषण, प्रोफाइलिंग या अपराध जाँच के लिए प्रयोग किया जा सकता है। ऐसी प्रक्रिया उद्देश्य–सीमा के सिद्धांत को कमजोर करती है और नागरिकों की डेटा–संबंधी अपेक्षाओं को प्रभावित करती है। पुलिसिंग में एआई के उपयोग से संबंधित निगरानी संबंधी प्रश्नों का मूल्यांकन केवल अपराध–नियंत्रण की प्रभावशीलता के आधार पर नहीं किया जा सकता। इनके साथ नागरिक स्वतंत्रता, गोपनीयता, उद्देश्य–सीमा, डेटा–सुरक्षा तथा लोकतांत्रिक जवाबदेही के व्यापक सिद्धांत भी जुड़े हुए हैं। इसलिए, एआई संचालित निगरानी प्रणालियों का संचालन स्पष्ट विधिक सीमाओं, स्वतंत्र निगरानी व्यवस्था तथा मजबूत डेटा–सुरक्षा उपायों के अंतर्गत किया जाना आवश्यक है, ताकि तकनीकी दक्षता और संवैधानिक स्वतंत्रताओं के बीच संतुलन बनाए रखा जा सके।

5. एआई से जुड़े अपराध और जांच की जटिलताएंः

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने पुलिसिंग के लिए केवल नए अन्वेषणात्मक उपकरण ही उपलब्ध नहीं कराए हैं, बल्कि अपराध के नए स्वरूपों को भी जन्म दिया है। आज कानून–प्रवर्तन एजेंसियों को ऐसे अपराधियों का सामना करना पड़ रहा है जो उन्हीं उन्नत तकनीकों का उपयोग कर रहे हैं जिन्हें अपराध–नियंत्रण के लिए विकसित किया गया था। विशेष रूप से, डीपफेक (Deepfake) ऑडियो और वीडियो, वॉयस क्लोनिंग तथा स्वचालित संचार प्रणालियाँ पहचान की चोरी, वित्तीय धोखाधड़ी, ब्लैकमेल, दुष्प्रचार और राजनीतिक हेरफेर जैसे अपराधों को अधिक विश्वसनीय, सुलभ और व्यापक बना रही हैं। इसी प्रकार, एआई संचालित सोशल इंजीनियरिंग तकनीकों ने ऑनलाइन धोखाधड़ी को बड़े पैमाने पर संचालित करना अपेक्षाकृत आसान और कम लागत वाला बना दिया है।

भारतीय संदर्भ में साइबर धोखाधड़ी, सरकारी अधिकारियों या संस्थाओं का प्रतिरूपण तथा डिजिटल वित्तीय अपराध पुलिस एजेंसियों के समक्ष प्रमुख चुनौतियों के रूप में उभरे हैं। इन अपराधों की जाँच प्रायः जटिल हो जाती है क्योंकि इनमें अंतर–राज्यीय अथवा अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क, बहु–स्तरीय बैंकिंग चौनलों तथा एन्क्रिप्टेड डिजिटल प्लेटफार्मों का उपयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप,

अपराधियों की पहचान, अधिकार–क्षेत्र का निर्धारण तथा प्रभावी अभियोजन पहले की तुलना में अधिक कठिन हो गया है।
एआई सक्षम सिंथेटिक मीडिया न्यायिक और अन्वेषण प्रक्रियाओं के लिए भी गंभीर चुनौतियाँ उत्पन्न करता है। यदि छवियाँ, ऑडियो रिकॉर्डिंग और वीडियो सामग्री अत्यंत यथार्थवादी रूप से कृत्रिम रूप में निर्मित की जा सकती हैं, तो किसी डिजिटल साक्ष्य की प्रामाणिकता स्थापित करना अधिक जटिल हो जाता है। इसके अतिरिक्त, एक नई चुनौती यह भी उभरती है कि आरोपी वास्तविक और प्रामाणिक डिजिटल साक्ष्यों को भी 'कृत्रिम रूप से निर्मित' बताकर उनकी विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लगाने का प्रयास कर सकते हैं।
इन परिस्थितियों में डिजिटल फॉरेंसिक क्षमताओं का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 ने इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों और डिजिटल साक्ष्यों को न्यायिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है, किंतु ऐसे साक्ष्यों की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता सुनिश्चित करने के लिए उन्नत तकनीकी सत्यापन तंत्रों की आवश्यकता बनी रहती है। इसी प्रकार, सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 तथा भारतीय न्याय संहिता, 2023 में प्रतिरूपण, धोखाधड़ी और अश्लील डिजिटल सामग्री से संबंधित अपराधों के प्रावधान विद्यमान हैं, फिर भी एआई आधारित अपराधों की तीव्र विकसित होती प्रकृति निरंतर विधिक और नीतिगत अद्यतन की मांग करती है।
एआई और मशीन लर्निंग से संबंधित चुनौतियाँ केवल पुलिस द्वारा तकनीक के उपयोग तक सीमित नहीं हैं, बल्कि उन अपराधों तक भी विस्तारित हैं जिन्हें यही तकनीकें संभव बनाती हैं। परिणामस्वरूप, प्रभावी पुलिसिंग के लिए केवल एआई को अपनाना पर्याप्त नहीं है। समान रूप से आवश्यक यह भी है कि पुलिस संस्थाएँ डिजिटल फॉरेंसिक, साइबर अन्वेषण, साक्ष्य प्रमाणीकरण और उभरते एआई सक्षम अपराधों से निपटने की क्षमता का निरंतर विकास करें। यही क्षमता भविष्य में तकनीकी नवाचार और विधिक उत्तरदायित्व के बीच संतुलन स्थापित करने की आधारशिला सिद्ध होगी। इन प्रमुख चुनौतियों के अतिरिक्त संस्थागत क्षमता, कौशल और खरीद ऑटोमेशन बायस और मानवीय निर्णय–क्षमता का क्षरण जन–विश्वास, वैधता और नैतिकता से संबंधित चुनौतियाँ भारतीय पुलिस सेवा के समक्ष बहुत गहरे प्रश्न उत्पन्न करते हैं।

निष्कर्ष:

कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग भारतीय पुलिस सेवाओं को अपराध–विश्लेषण की क्षमता बढ़ाने, जांच प्रक्रियाओं को अधिक दक्ष बनाने तथा तीव्र गति से विकसित हो रहे साइबर अपराधों का सामना करने के महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करती हैं। अपराध मानचित्रण, डिजिटल फॉरेंसिक, बायोमेट्रिक पहचान, डेटा विश्लेषण और साइबर अपराध अन्वेषण जैसे क्षेत्रों में इन तकनीकों का उपयोग पुलिसिंग की प्रभावशीलता को बढ़ा सकता है। तथापि, यही तकनीकें निजता, समानता, विधिसम्मत प्रक्रिया, पारदर्शिता और सार्वजनिक विश्वास से संबंधित गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न करती हैं।
इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि एआई संचालित पुलिसिंग के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ केवल तकनीकी नहीं, बल्कि विधिक, नैतिक और संस्थागत प्रकृति की हैं। स्पष्ट विधिक ढाँचे का अभाव, एल्गोरिद्मिक पक्षपात, अपारदर्शी निर्णय–प्रक्रियाएँ, व्यापक निगरानी की संभावनाएँ, एआई सक्षम अपराधों का उभार, संस्थागत क्षमता की सीमाएँ, ऑटोमेशन बायस तथा पुलिस नैतिकता और जनविश्वास पर संभावित प्रभाव, ऐसे प्रमुख प्रश्न हैं जिन्हें संबोधित किए बिना तकनीकी नवाचारों का उत्तरदायी उपयोग संभव नहीं होगा। इसलिए इन चुनौतियों को तकनीकी प्रगति के विरुद्ध तर्क के रूप में नहीं, बल्कि उसके प्रभावी और नियंत्रित उपयोग की आवश्यकता के रूप में समझा जाना चाहिए।
इस अध्ययन से यह स्पष्ट है कि एआई स्वयं न तो पुलिसिंग के लिए स्वाभाविक रूप से लाभकारी है और न ही हानिकारक। उसके प्रभाव का निर्धारण उस विधिक, नैतिक और संस्थागत ढाँचे से होगा जिसके भीतर उसका उपयोग किया जाता है। यदि एआई का विकास पारदर्शिता, जवाबदेही, मानवाधिकार संरक्षण और संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप किया जाता है, तो यह अधिक प्रभावी, सटीक और उत्तरदायी पुलिस सेवा के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसके विपरीत, यदि इन सुरक्षा उपायों की उपेक्षा की जाती है, तो वही तकनीकें विद्यमान सामाजिक असमानताओं को और गहरा कर सकती हैं तथा पुलिस संस्था की लोकतांत्रिक वैधता और सार्वजनिक विश्वास को कमजोर कर सकती हैं। इस प्रकार, भारतीय पुलिसिंग का भविष्य केवल तकनीकी प्रगति पर नहीं, बल्कि उस क्षमता पर निर्भर करेगा जिसके माध्यम से राज्य तकनीकी नवाचार और संवैधानिक उत्तरदायित्व के बीच संतुलन स्थापित कर सके।
पुलिस द्वारा एआई के इस्तेमाल के लिए एक खास कानूनी ढांचा, असर का आकलन, टेस्टिंग और स्वतंत्र ऑडिट, इंसानी निगरानी और प्रक्रिया से जुड़े सुरक्षा उपाय, पारदर्शिता और जिम्मेदारी से खरीद–फरोख्त, क्षमता बढ़ाना और खास यूनिट बनाना, स्वतंत्र निगरानी और समाधान, आचार संहिता को अपडेट करना और नैतिक संस्कृति बनाना, समुदाय की भागीदारी और जनता से बातचीत, एक एकीकृत गवर्नेंस ढांचे का प्रयोग करके एक निष्पक्ष प्रशासनिक तंत्र का विकास किया जा सकता है।

References

1. Angwin, J., Larson, J., Mattu, S., & Kirchner, L. (2016, May 23). Machine bias. *ProPublica*.
2. *Anuradha Bhasin v. Union of India*, (2020) 3 SCC 637 (India).
3. Barocas, S., & Selbst, A. D. (2016). Big data's disparate impact. *California Law Review, 104*(3), 671–732. https://doi.org/10.15779/Z38BG31
4. *Bharatiya Nagarik Suraksha Sanhita*, No. 46 of 2023, Acts of Parliament (India).
5. *Bharatiya Nyaya Sanhita*, No. 45 of 2023, Acts of Parliament (India).
6. *Bharatiya Sakshya Adhiniyam*, No. 47 of 2023, Acts of Parliament (India).
7. Brayne, S. (2020). *Predict and surveil: Data, discretion, and the future of policing*.Oxford, Oxford University Press.
8. Buolamwini, J., & Gebru, T. (2018). Gender shades: Intersectional accuracy disparities in commercial gender classification. *Proceedings of Machine Learning Research, 81*, 77–91.
9. Common Cause, & Lokniti-Centre for the Study of Developing Societies. (2018). *Status of policing in India report 2018: Police adequacy and working conditions*. Common Cause.
10. Council of Europe. (2001). *The European code of police ethics* (Recommendation Rec(2001)10). Council of Europe, Committee of Ministers.
11. *Digital Personal Data Protection Act*, No. 22 of 2023, Acts of Parliament (India).
12. European Union. (2024). Regulation (EU) 2024/1689 of the European Parliament and of the Council laying down harmonised rules on artificial intelligence (Artificial Intelligence Act). *Official Journal of the European Union*.
13. Ferguson, A. G. (2017). *The rise of big data policing: Surveillance, race, and the future of law enforcement*. New York, New York University Press.
14. *Information Technology Act*, No. 21 of 2000, Acts of Parliament (India).
15. International Criminal Police Organization (INTERPOL), & United Nations Interregional Crime and Justice Research Institute (UNICRI). (2023). *Toolkit for responsible AI innovation in law enforcement*. INTERPOL & UNICRI.
16. Internet Freedom Foundation. (n.d.). *Project Panoptic*. https://panoptic.in
17. *Justice K. S. Puttaswamy (Retd.) v. Union of India*, (2017) 10 SCC 1 (India).
18. *Manohar Lal Sharma v. Union of India*, W.P. (Crl.) No. 314 of 2021 (India Oct. 27, 2021).
19. Marda, V., & Narayan, S. (2020). Data in New Delhi's predictive policing system. In *Proceedings of the 2020 Conference on Fairness, Accountability, and Transparency* (pp. 317–324). Association for Computing Machinery. https://doi.org/10.1145/3351095.3372865
20. Ministry of Electronics and Information Technology. (2025). *India AI governance guidelines*. Government of India.
21. NITI Aayog. (2021). *Responsible AI #AIForAll: Approach document for India, Part 1—Principles for responsible AI*. Government of India.
22. Perry, W. L., McInnis, B., Price, C. C., Smith, S. C., & Hollywood, J. S. (2013). *Predictive policing: The role of crime forecasting in law enforcement operations*. Rand Corporation.
23. *Prakash Singh v. Union of India*, (2006) 8 SCC 1 (India).
24. Richardson, R., Schultz, J. M., & Crawford, K. (2019). Dirty data, bad predictions: How civil rights violations impact police data, predictive policing systems, and justice. *New York University Law Review Online, 94*, 15–55.
25. Skitka, L. J., Mosier, K. L., & Burdick, M. (1999). Does automation bias decision-making? *International Journal of Human-Computer Studies, 51*(5), 991–1006. https://doi.org/10.1006/ijhc.1999.0252
26. Tyler, T. R. (2004). Enhancing police legitimacy. *The ANNALS of the American Academy of Political and Social Science, 593*(1), 84–99. https://doi.org/10.1177/0002716203262627
27. United Nations. (1979). *Code of conduct for law enforcement officials* (General Assembly Resolution 34/169). United Nations.
28. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization. (2021). *Recommendation on the ethics of artificial intelligence*. UNESCO.
29. Završnik, A. (2021). Algorithmic justice: Algorithms and big data in criminal justice settings. *European Journal of Criminology, 18*(5), 623–642. https://doi.org/10.1177/1477370819876762